क्या राम ने सीता परित्याग किया था ?

देवर्षि कलानाथ शास्त्री

(राष्ट्रपति सम्मानित), प्रधान सम्पादक ''भारती''संस्कृत मासिक
पीठाचार्य, भाषामीमांसा एवं शास्त्रशोध पीठ - विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर
पूर्व अध्यक्ष - राजस्थान संस्कृत अकादमी
आधुनिक संस्कृत पीठ - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
पूर्व निदेशक - संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार
सदस्य - संस्कृत आयोग, भारत सरकार

रामकथा इस देश के जनमानस की जीवनी शक्ति है। उसी ने राम को मर्यादापुरुषोत्तम और रामराज्य को आदर्श राज्य की छवि दी है। इस कथा में दो एक ही ऐसी गुत्थियाँ हैं, जो इस छवि पर प्रश्नचिन्ह लगाती है। इनमें से प्रमुख है राम के द्वारा गर्भवती सीता का निर्वासन। कुछ सदियों से यह कथा प्रचलित है कि अच्छा भला रामराज्य चल रहा था, किन्तु जब राम ने यह सुना कि कोई धोबी रावण के यहाँ कुछ अर्से तक रह आने का आधार लेकर (अपनी पत्नी को डाँटते हुए) सीता के चरित्र पर आक्षेप कर रहा था, तो उन्होंने सीता से किसी भी प्रकार का स्पष्टीकरण लिये बिना एकतरफा फैसला करके उसे गंगातीर के आश्रमों में अकेला छोड़ दिया। वहाँ अनाथ और असहाय अवस्था में रोती हुई सीता को वाल्मीकि ने सहारा दिया और वहीं लव-कुश का जन्म हुआ आदि। संस्कृत ग्रंथों से लेकर लोककथाओं तक यह वृत्तांत फैला हुआ है, किन्तु राम और सीता के निर्मल चरित्रों के बीच यह अटपटी बात बहुतों के गले नहीं उतरती कि राम जैसा न्यायप्रिय सम्राट् केवल इस तरह की अफवाह को लोकसम्मत अपराध मान कर बिना किसी जाँच के ऐसी हालत में एकतरफा फैसला कर जब सीता जैसी आदर्श सती माँ बनने वाली थी, खासकर तब जब उसकी अग्निपरीक्षा एक बार ली जा चुकी थी। राम की छवि पर केवल एक दो अन्य प्रश्नचिन्ह और रहते हैं, वे हैं छिपकर बाली को मारना तथा तपस्या कर रहे शंबूक का केवल इसलिए वध कर देना कि वह शूद्र होकर भी तपस्या कर रहा था, किन्तु सीता परित्याग वाली बात तो अनेक वर्गों ने आक्रोशपूर्वक समय-समय पर उठायी है।

यह घटना तो बहत पुरानी नहीं है कि दूरदर्शन पर जब रामानन्द सागर की रामायण का प्रसारण हो रहा था, जिसका प्रमुख आधार तुलसी का रामचरित-मानस था, उसके धारावाहिक राम के राज्याभिषेक के साथ समाप्त हो

गये, किन्तु लव-कुश वाली कथा को वाल्मीकि के आधार पर उन्होंने उत्तररामायाण के नाम से फिर शुरू करना चाहा तो इस पर अनेक आपत्तियाँ उठीं। कुछ प्रतिष्ठित नागरिकों की प्रेरणा से जिनमें हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार रामकुमार वर्मा शामिल थे, जस्टिस गोपीनाथ ने प्रयाग उच्च न्यायालय में याचिका भी दायर की और सीता निर्वासन वाली कथा न दिखाये जाने के पक्ष में निर्णय भी हुआ, किन्तु उच्चतम न्यायालय में अपील के बाद इन धारावाहिकों को अनुमति मिल गयी। उस पर स्वयं रामानन्द सागर ने कुछ स्पष्टीकरण देते हुए और यह बतलाते हुए कि तुलसीदास के 'मानस' में तो यह कथा नहीं है पर अन्य ग्रंथों के आधार पर हम इसे दिखा रहे हैं, यह कथा दिखायी। फिर भी उसमें विविध आपत्तियों से बचने के लिए कहानी को नया मोड दिया गया कि राम ने सीता को नहीं निकाला, बल्कि सीता ने अफवाहों को देखते हुए अयोध्या के सम्राट् की छवि को धूमिल न होने देने हेतु स्वयं राजमहल छोड़ दिया आदि। रामकथा में इस प्रकार की गलतियाँ निकालने की आवश्यकता शायद इसीलिए पड़ी, कि घटना ही ऐसी है कि बहुत से हृदयों को विचार के लिए विवश कर देती है। इस बारे में अनेक शोध हुए हैं, कि क्या सचमुच राम ने सीता का परित्याग किया था?

आज तो इस घटना को सच मानने का यह आधार है कि वाल्मीकि ने उत्तरकांड में इस घटना का वर्णन किया है किन्तु अनेक विद्वानों ने जिनमें भारतीय और विदेशी दोनों प्रकार के शोध विद्वान् सम्मिलित हैं, यह शोध किया है कि वाल्मीकि रामायण का वह अंश परवर्ती या प्रक्षिप्त है, जिसमें इस घटना का वर्णन है। जब जब विदेशी विद्वान् हमारे प्राचीन ग्रंथों में कुछ अंशों को अनुसंधान के बल पर प्रक्षिप्त करार देते हैं, तो हम में से बहुतों की प्रतिक्रिया यह होती है कि जो अंश न रुचे उसे प्रक्षिप्त करार देने में विदेशियों का स्वार्थ रहता है और उनके दो लक्ष्य ही प्रमुख रहते हैं, एक तो हमारे प्राचीन ग्रंथों को जहाँ तक बन सके अर्वाचीन सिद्ध करना, दूसरे उनमें से जब चाहें तब किसी अंश को प्रक्षिप्त बता देना। इस दृष्टि से हमें आँख मूँदकर तो यह नहीं मानना चाहिए कि अमुक अंश प्रक्षिप्त है, किन्तु यदि उसके पुष्ट प्रमाण हों और शोध दृष्टि में कोई निहित स्वार्थ नहीं दिखलाई देता हो तो उसे नकारने का भी कोई कारण नहीं है।

वाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड का अधिकांश और बालकांड के कुछ सर्ग बाद में जोड़े गए, यह बात जर्मन विद्वान जैकोबी ने प्रमाणों सहित कही थी। अंग्रेज विद्वान् तो ब्रिटिश साम्राज्य के निहित स्वार्थों के कारण अटपटी स्थापनाएँ भी करें तो बात समझ में आती है, पर जैकोबी जैसे जर्मन विद्वान का ऐसा कोई इरादा हो नहीं सकत। फिर इसके अनेक प्रमाण भी थे कि वाल्मीकि के पाठ में समय-समय पर प्रक्षेप हुए हैं। जब प्राचीन भारतीय विद्वानों ने भी यह बात मानी तो इस शोध की सच्चाई पर विश्वास होने लगा। सीता निर्वासन की कथा प्रक्षिप्त है, यह बात तो स्वयं तुलसीदास ने भी मानी लगती है, तभी उन्होंने अपने 'मानस' में इसका कोई जिक्र नहीं किया और राम के

राज्याभिषेक के बाद राम राज्य का वर्णन करते हए बताया कि अयोध्या में सीता के लव और कुश दो राजकुमार हुए -

दुई सुत सुंदर सीता जाए, लव कुस बेद पुरानन्ह गाए ॥

यह बात तो मानी हुई है कि वाल्मीकि रामायण का आज जो पाठ मिलता है, वही मूल पाठ हो सो बात नहीं है। उसमें समय-समय पर परिवर्तन-परिवर्धन हुए हैं। आज के संस्करणों में भी उत्तर और दक्षिण भारत के पाठों में अंतर है। विद्वानों ने खोजबीन करके अनेक अंतः साक्ष्यों और बाह्य प्रमाणों से सिद्ध किया है, कि कितना पाठ कब जोड़ा गया और कौन-सा अंश मूलतः रामायण में था और कितना पुराना है। जैकोबी तथा अनेक भारतीय विद्वानों ने यह बतलाया कि बालकांड के प्रथम चार सर्ग और लगभग पूरा उत्तरकांड बाद में जोड़ा गया। इसके अनेक प्रमाण इन विद्वानों ने दिये हैं। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं, कि प्रथम तो बालकांड और उत्तरकांड की भाषा शैली शेष पाँच कांडों से भिन्न है, पाँच कांडों की उत्कृष्ट शैली और सहजता उनमें नहीं है। पाँच कांडों में राम को महान् जननायक के रूप में ही चित्रित किया गया है, केवल बालकांड के प्रारम्भ में और उत्तरकांड में उन्हें विष्णु का अवतार बताया गया है, जिससे लगता है कि वैष्णव भक्ति का नायक राम को बनाने के लिहाज से ये अंश बाद में जोड़े गये। इसके अतिरिक्त पाँच कांडों में इन्द्र को सर्वोच्च देवता बताया गया है, केवल इन्हीं दो कांडों में विष्णु को अधिक महत्व दिया गया है और इन्द्र को उससे नीचा स्थान मिला है। पाँच कांडों में ऐसा कोई कथानक नहीं है कि वाल्मीकि राम के समकालीन थे। यह बात समझ में भी आती है। इन दो कांडों में ही ऐसा बताया गया है कि वाल्मीकि राम के समय हुए थे, उन्होंने लव-कुश का पालन किया था। अयोध्या कांड में तीन श्लोक अवश्य मिलते हैं जिनमें राम, लक्ष्मण का वाल्मीकि से मिलना वर्णित है। यह तो स्पष्ट ही है कि बालकांड के वे प्रारम्भिक अंश तो वाल्मीकि के लिखे हुए नहीं हो सकते, जिनमें यह कथा है कि भगवान वाल्मीकि ने नारद से ऐसा कहा आदि। यदि स्वयं वाल्मीकि लिखते तो या तो मैंने ऐसा कहा' आदि लिखते, यदि अपने आपको अन्य पुरुष में लिखते तो भी स्वयं को भगवान कभी न लिखते।

इस स्थापना की सबसे अधिक प्रत्यायक बात यह लगती है, कि अयोध्याकांड से युद्धकांड तक पूरी रामकथा एक सूत्र में चलती है और युद्ध कांड में समाप्त हो जाती है। ग्रंथ की समाप्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि युद्ध कांड के अन्त में फलश्रुति आ जाती है कि जो इस ग्रंथ को पढ़ेगा उसका कल्याण होगा आदि। ऐसी फलश्रुति केवल ग्रंथ के अन्त में आती है, बीच में कहीं नहीं। युद्धकांड के अलावा किसी भी कांड में ऐसी फलश्रुति नहीं है। इससे यह सिद्ध होता है कि मूलतः रामायण युद्धकांड में समाप्त हो गयी थी। उसे बाद में फिर इधर उधर की कथाओं को जोड़ कर बढ़ाया गया और उत्तर कांड के अन्त में फिर फलश्रुति लिखी गयी। ऐसे जोड़ने वालों ने जोड़ने का तो ध्यान रखा,

युद्धकांड की फलश्रुति को हटाने का ध्यान नहीं रखा। यही कारण है कि रामायण की कथा की जो अनुक्रमणिका वर्तमान रामायण में आती है वह दोहरी है। मूल रामायण में राज्याभिषेक तक की कथा है। सीता निर्वासन का जिक्र भी नहीं है। अर्थात् रामायण के कथासार का वह संस्करण ही पुराना था। दूसरी अनुक्रमणिका में फिर सारी कथाओं को गिनाया गया है और उसमें नयी बातें जोड़ी गयी हैं। कुछ विद्वानों ने सप्रमाण सिद्ध किया है, कि मूलतः जो पांच कांड थे, उनमें पहला अयोध्याकांड था। इसमें से अयोध्या के वर्णन के कुछ सर्ग बाद में बालकांड में जोड़ दिये गये।

बालकांड के सर्गों में परस्पर जो अंतर्विरोध है उससे भी लगता है कि कुछ कथा बाद में अवश्य जोड़ी गयी है। ऋष्यशृंग ऋषि (जिसे तुलसीदास ने शृंगी ऋषि कहा है) मूलतः रामायण में नहीं था, उनकी कथा बाद में जोड़ी गयी है। पुत्रेष्टि यज्ञ भी बाद में जोड़ा गया है। तभी तो सर्ग 17 तक पुत्रेष्टि यज्ञ का हवाला है और खीर खा कर रानियाँ पुत्र पैदा करेंगी ऐसी आशा व्यक्त की गई है, जबकि 18वें सर्ग में पुत्रेष्टि यज्ञ का कोई नामोनिशान नहीं है और यह कहा गया है कि दशरथ ने जो अश्वमेध यज्ञ किया था, उसके फलस्वरूप उन्हें पुत्रप्राप्ति की आशा हुई। बेचारे टीकाकार भी इन अंतर्विरोधों का कोई समाधान प्रस्तुत नहीं कर पाए।

इस प्रकार स्वयं वाल्मीकीय रामायण के अन्तःसाक्ष्यों से यह लगता है, कि कुछ अंश अवश्य बाद में जोड़ा गया था। बाद में कुछ अन्य विद्वानों ने बहिःसाक्ष्यों के आधार पर भी इस बात को प्रमाणित किया कि बालकांड और उत्तरकांड के बहुत से अंश प्रक्षिप्त हैं। सीता-निर्वासन और लव-कुश वाली कथा केवल उत्तरकांड में मिलती है, बाकी के किसी भी कांड में इस कथा का किसी प्रसंग में किसी रूप में भी कोई संदर्भ नहीं है। केवल बालकांड के प्रथम चार सर्गों में एक दो जगह कुश का संदर्भ आता है। इन विद्वानों की उपर्युक्त स्थापना के अनुसार यह सिद्ध होता है कि वाल्मीकि ने जब रामायण लिखी होगी, उस समय उसमें सीता-निर्वासन और लव-कुश के जन्म की कथा नहीं रही होगी। यह बात सारे प्राचीन वाङ्मय का मंथन कर वाल्मीकि के पाठ पर अनुशीलन करने वाले अनेक विद्वानों ने बहिःसाक्ष्यों के आधार पर भी कही है।

जयपुर के प्रसिद्ध विद्वान् स्व.डॉक्टर पुरुषोत्तम लाल भार्गव पुराणों की प्रामाणिकता को स्वीकार करते हैं और आर्य समाज तथा अनेक विदेशी विद्वानों की तरह पुराणों को कपोल कल्पना नहीं मानते। विदेशी विद्वानों में पार्टिज आदि कुछ विद्वान ही ऐसे हैं जो पुराणों को प्रामाणिक मानने के पक्षधर हैं। यह तो सभी मानते हैं कि पुराणों के पाठों में परिवर्तन परिवर्धन बाद तक होते रहे, किन्तु इसी आधार पर उनकी प्रामाणिकता नकार देना बुद्धिमानी नहीं होगी। आवश्यकता इस बात की है कि गहन अनुशीलन के बाद यह विश्लेषण किया जाय कि पुराणों के कौन से अंश वेद, उपनिषद्, जैन व बौद्ध वाङ्मय, शिलालेखों तथा अन्य अभिलेखों के साक्ष्य से प्राचीन सिद्ध होते हैं और कौन से अंश बाद में जोड़े जाने के पुष्ट प्रमाण मिलते हैं। कुछ विद्वानों ने पर्याप्त श्रम कर ऐसा विवेचन भी किया है। स्वयं

डॉक्टर भार्गव ने इस प्रकार के अध्ययन कर ग्रंथ लिखे, जिनमें से एक अंग्रेजी ग्रंथ 'रिट्रीवल आफ हिस्ट्री फ्रॉम पौराणिक मिथ्स' कुछ प्रचलित कथाओं के बाद में जोड़े जाने का प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत करता है। इसमें भी उन्होनें बतलाया है कि कौन कौन से अंश वाल्मीकि रामायण में बाद में जोड़े गए होंगे। उन्होंने रामायण और गीता का मूलपाठ कैसा रहा होगा यह प्रक्षेपों को हटा कर बताया है तथा 'गीता एज इट वाज' और 'रामायण एज इट वाज' शीर्षक दो ग्रन्थ लिखे।

परंपरावादियों को सामान्यतः यह बात पसंद नहीं आती, कि हमारे प्राचीन श्रद्धेय ग्रंथों में प्रक्षेप की बात आसानी से कह दी जाय, क्योंकि उससे पूरे पाठ पर श्रद्धा तो कम हो ही जाती है, पर वाल्मीकि के प्राचीन टीकाकार गोविन्दराज ने जब स्वयं अपनी टीका में यह लिख दिया कि बालकांड के द्वितीय सर्ग से चतुर्थ सर्ग पर्यन्त कथा उनके किसी शिष्य ने बाद में जोड़ी होगी (1/5/1) तब ऐसी बातों के न मानने का कोई कारण नहीं दिखता। सीता-निर्वासन या लव-कुश का कोई संदर्भ अयोध्या से ले कर युद्धकांड तक न आना तो यह सिद्ध करता ही है, कि सीता निर्वासन की कथा बाद में जोड़ी गयी हो सकती है, इसके अतिरिक्त ब्रह्मांड, वायु, कूर्म, गरुड और विष्णु पुराणों में रामकथा अवश्य आती है, किन्तु उसमें सीता के परित्याग का और उसके बाद लव-कुश के जन्म का कहीं कोई संदेश भी नहीं है। महाभारत में भी रामकथा विस्तार से वर्णित है पर उसमें भी इन दोनों प्रसंगों का कोई जिक्र नहीं है। ये सारे पुराण बहुत प्राचीन हैं, यह बात निर्विवाद है। यदि राम ने सीता का त्याग किया होता, तो इन पुराणों में उसका कोई संकेत तो होता। कुछ पुराणों में रामकथा है किन्तु वाल्मीकि का नाम नहीं है। इस आधार पर तथा उनके अन्य प्रमाणों से यह माना जाता है, कि वाल्मीकि की रामायण से पूर्व इन पुराणों का निर्माण हुआ होगा अन्यथा इनमें वाल्मीकि का नाम होता। अन्य अनेक पुराणों में वाल्मीकि का तथा उनके द्वारा रामायण रचे जाने का विवरण मिलता है। यह माना जाता है कि

वे वाल्मीकि से परवर्ती हैं। यह भी विद्वानों की मान्यता है, कि महाभारत का मूल पाठ वाल्मीकि से पुराना था। यह तो निर्विवाद सिद्ध हो गया है, कि महाभारत में भी परिवर्धन होते रहे, मूलतः उसका नाम 'जय' था, फिर 'भारत' हुआ फिर 'महाभारत'। आज जो पाठ उपलब्ध है, उसमें वाल्मीकि का नाम भी है और रामकथा भी तथापि उसमें सीता परित्याग का जिक्र नहीं है। हरिवंशपुराण में भी यह प्रसंग नहीं है। इससे भी यह अनुमान होता है, कि उस समय तक जो वाल्मीकि रामायण उपलब्ध थी, उसमें सीता त्याग वाला अंश नहीं था।

तब यह सीता-परित्याग की कथा कहाँ से आयी और वाल्मीकि रामायण में कैसे जुड़ गई? इस पर भी विद्वानों ने विचार-मंथन किया है। इसके लिए यह देखा जाना चाहिए कि रामकथा में सीता त्याग वाली बात किन किन ग्रंथों में और कौन कौनसे पुराणों में मिलती है? वे कब लिखे गये? इससे यह अंदाजा हो सकता है कि किस काल में यह

प्रक्षेप हुआ होगा। सीता निर्वासन कभी नहीं हुआ था और रामायण में वाल्मीकि ने ऐसी कथा नहीं लिखी यह बात बड़े जोर शोर से चित्रकूट के रामानंद-पीठ के अधीश्वर श्री रामभद्राचार्य जी ने सिद्ध की है।

1990 मे 'सीता निर्वासन नहीं' शीर्षक से एक पुस्तक भी प्रकाशित कर दी है, जिसमें चार निश्वासों में यह स्थापित किया है, कि वाल्मीकि में यह कथा प्रक्षिप्त है। उनके अनुसार इस प्रकार का प्रक्षेप गुणाढ्य ने किया था, जिसने प्राकृत की अनेक कहानियों का संग्रह 'बडढ्कहा' नाम से पैशाची प्राकृत में लिखा था, जो बृहत् कथा नाम से प्रसिद्ध है। उसका मूल पाठ तो नहीं मिलता, किन्तु उसके आधार पर लिखी क्षेमेन्द्र कृत बृहत्कथामंजरी और सोमदेव का कथा-सरित्सागर आज भी उपलब्ध है। यह गुणाढ्य ईसा की पहली सदी के आस पास हुआ माना जाता है। उसने राम के चरित्र में जान बूझ कर प्रश्नचिन्ह लगाने हेतु यह कथा जोड़ दी, ऐसा रामभद्राचार्य जी का मानना है। डाक्टर भार्गव आदि विद्वान् मानते हैं, कि शायद सबसे पहले कालिदास ने अपने रघुवंश में यह कथा लिखी और उसके बाद सब जगह फैल गयी। कालिदास के पूर्ववर्ती भास ने रामकथा पर अनेक नाटक लिखे, पर किसी में भी सीता निर्वासन का संकेत नहीं है। श्रीमद्भागवत मे यह प्रसंग है। जो लोग श्रीमद्भागवत को कालिदास से पूर्व का मानते है, उनके अनुसार सर्वप्रथम श्रीमद्भागवत में यह कथा आयी।

रामकथा से सम्बन्धित काव्यों में तो कालिदास ने सर्वप्रथम अपनी मौलिक प्रतिभा का उपयोग करते हुए रघुवंश महाकाव्य में काव्यात्मक शैली में यह वर्णन किया है, कि किस प्रकार लोकापवाद के आधार पर राम ने बिना कुछ पूछे या कहे भोली भाली सीता को लक्ष्मण के हाथों गंगातट पर छुड़वा दिया। वहाँ सीता ने लक्ष्मण के मुँह से पहली बार यह रहस्य जान कर राम को जो संदेश कहलवाया है, वह इतना मर्मस्पर्शी है कि आज भी पाठकों के दिल को दहला देता है। उसमें सीता ने जिस प्रकार राम को उलाहना दिया है, किन्तु जरा भी उन पर आरोप नहीं लगाया, यह भारतीय नारी के चरम उत्कर्ष का प्रमाण है, किन्तु उसके संदेश में कालिदास का विद्रोह भी स्पष्ट झलकता है। उससे लगता है कि सीता परित्याग का औचित्य कालिदास के भी गले नहीं उतरा था। 'लक्ष्मण, मेरी ओर से राजा राम से पूछना कि एक बार अग्निपरीक्षा में तप कर शुद्ध हो जाने के बाद भी केवल किसी अफवाह के आधार पर एकतरफा मुझे यों छोड़ देना कहाँ का न्याय है? क्या रघुकुल का और आपके शील और विवेक का भी यही न्याय है? जो भी हो, मैं तो मानती हूँ कि इतने विवेकी और कल्याण बुद्धि वाले होते हुए आप मुझ पर यह अत्याचार करें यह तो संभव नहीं। यह तो मेरे ही पूर्व जन्म के पापों का विपाक है। खैर, अब तो यही करूँगी कि तुम्हारें वंशधर को जन्म देने के बाद फिर कठिन तपस्या करूँगी यह फल प्राप्त करने हेतु, कि अगले जन्म में भी मैं तुम्हें ही पति के रूप में पाऊँ, किन्तु तब ऐसे वियोगों के हादसे न हों।' यह सारांश है उस संदेश का।

बाद में इस कथा को भवभूति ने उत्तररामचरित नामक नाटक में निबद्ध किया। कालिदास और भवभूति दोनों ने असहाय सीता का वाल्मीकि आश्रम में रहना और वाल्मीकि की देखरेख में लवकुश का जन्म, वाल्मीकि द्वारा उन्हें धनुर्विद्या में निष्णात बनाना आदि का विस्तृत वर्णन किया है और अन्त में यह बताया है, कि किस प्रकार सारी जनता ने सीता की पवित्रता का लोहा माना। वाल्मीकि के अद्यतन पाठ में यह और मिलता है कि यह सब कुछ हो जाने पर भी बाद में सीता ने खिन्न होकर उनकी दुरवस्था का राम की राजसभा में उद्घोष करते हुए पृथ्वी माता से अपनी गोद में लेने की प्रार्थना की और सबके देखते-देखते सीता पृथ्वी में समा गयी। इस कथा के संकेत पुराणों में से केवल तीन में ही मिलते है, पद्म पुराण, अग्नि पुराण, गौतमी माहात्म्य और श्रीमद्भागवत में। इन तीनों पुराणों को बहुत प्राचीन नहीं माना जाता है। वे वाल्मीकि रामायण से तो निश्चित ही परवर्ती हैं ऐसा विद्वानों का मानना है। डाक्टर भार्गव के अनुसार तो उनके वर्तमान पाठ कालिदास से भी बाद के है।

इससे यह सिद्ध होता है कि मूलतः रामकथा में सीता का परित्याग नहीं था। इसीलिए प्राचीन पुराणों की रामकथा में इसका विवरण नहीं मिलता। जैन और बौद्ध कथाओं में जिनसे गुणाढ्य ने कथाओं का संकलन किया, ऐसी बात जोड़ दी गयी होगी। डाक्टर रामकुमार वर्मा ने तो एक पूरा काव्य उत्तरायण नाम से लिखा है जो प्रकाशित है। उसमें उन्होंने भी जोर देकर यह बतलाया है कि सीता त्याग की कथा वाल्मीकि में थी ही नहीं, बाद में जोड़ी गयी। भगवान बुद्ध ने अपनी पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल का त्याग कर प्रव्रज्या ले ली थी। मैथिलीशरण गुप्त ने इस मार्मिक घटना और यशोधरा की असहायता पर जो काव्य लिखा है, वह प्रसिद्ध है। यशोधरा की यह उक्ति भी प्रसिद्ध है 'सखि वे मुझसे कह कर जाते'। बुद्ध के निर्मल चरित्र पर पत्नी का वह प्रश्नचिन्ह जिस प्रकार देश के जनमानस को कचोटता था, उस प्रकार की कोई कचोट राम चरित्र पर लगा दी जाय, इस दृष्टि से यह प्रक्षेप किया गया होगा ऐसी मान्यता अनेक विद्वानों की है।

स्व. रामकुमार वर्मा तो सब जगह यही कहते थे, कि रामकथा के इस कलंक को धोना पूरे देश का पावन कर्तव्य है। तुलसीदास ने तभी तो सीता के परित्याग की कथा को 'मानस' में स्थान नहीं दिया। तुलसी कोई शोध विद्वान् तो थे नहीं, जो प्राचीन पाठों का अनुशीलन कर इस कथा को प्रक्षिप्त बतलाते पर उनका हृदय यह कभी नहीं मानता था, कि राम ने सीता जैसी सती का कभी त्याग किया हो। इसलिए उनकी रामकथा में इसका कोई संकेत नहीं है। यही नहीं दक्षिण की कंब रामायण, रंग रामायण, रामनाथ रामायण, एकनाथ कृत भावार्थ रामायण और उपेन्द्र भंज कृत वैदेही सुविलास आदि ग्रन्थों में सीता वनवास की कोई चर्चा नहीं है।

ब्रह्माण्ड पुराण तथा वायु, कूर्म, गरुड़ और विष्णु पुराण प्राचीन भी माने जाते हैं और प्रामाणिक भी। इनमें राम की कथा तो वर्णित है, पर सीता के वनवास का संदर्भ न होना यह प्रमाणित करता है कि वाल्मीकि रामायण में भी यह बात बाद में जोड़ी गई होगी। इन पुराणों में राम को विष्णु का स्वरूप नहीं बताया गया है। इसलिए यह माना जाता है कि वैष्णव भक्ति आन्दोलन से पूर्व का इनका पाठ है। वैष्णव भक्ति आन्दोलन के दौरान अनेक पुराणों में राम को विष्णु का रूप बताया जाने लगा था। वाल्मीकि के पाँच कांडों में भी राम केवल महामानव हैं, किन्तु बालकांड में स्वयं विष्णु आकर कहते हैं, कि मैं राम के रूप में दशरथ के घर अवतार लूँगा। इस कारण भी बालकांड को परवर्ती माना जाता है। विभिन्न विद्वानों ने वाल्मीकीय रामायण में जो जो अंश परवर्ती माने हैं, सीता निर्वासन की घटना का संदर्भ केवल उन्हीं में है, अन्यत्र नहीं।

युद्धकांड के एक प्रसंग से सीता-निर्वासन के इस कथानक की वैसे भी संगति नहीं बैठती। राम अग्निपरीक्षा के बाद सीता को पवित्र मानने की घोषणा इन शब्दों में करते हैं -

अनन्या हि मया सीता भास्करस्य यथा प्रभा। विशुद्धा त्रिषु लोकेषु मैथिली जनकात्मजा। न विहातुं मया शक्या कीर्तिरात्मवता यथा॥

(युद्धकांड 118/18-19) इनमें वे स्पष्ट कहते हैं कि अब मैं सीता को कभी नहीं छोडूँगा, जिस प्रकार सूर्य के साथ प्रभा है और यशस्वी के साथ कीर्ति, उसी प्रकार सीता मेरे साथ रहेगी। राम का वचन पत्थर की लीक होता था, यह भी सुप्रसिद्ध है। 'रामो द्विर्नाभिभाषते' यह घंटाघोष भी प्रसिद्ध है। युद्धकांड में यह घोषणा करके एक दो सर्गो के बाद राम सीता को अफवाहों के आधार पर ही छोड़ दें, यह क्या उनकी इस घोषणा से संगत होगा? इस प्रकार के वाल्मीकीय रामायण के अंतःसाक्ष्यों से भी सीता-निर्वासन की कथा प्रक्षिप्त सिद्ध होती है। राम के द्वारा तपस्या कर रहे शूद्र ऋषि शंबूक को मारने की घटना भी केवल उत्तरकांड में है। इनको उपर्युक्त आधारों पर प्रक्षिप्त मान लेने से राम के चरित्र के दो कलंक अपने आप ही धुल जाते है, यह बात अवश्य बहुत से रामभक्तों के मन को राहत देगी। यद्यपि सीता-निर्वासन की कथा की भावनात्मक कसक का कवियों के लिए जो काव्यात्मक महत्व है, उसका आधार हम खो देंगे, किन्तु ऊपर के सारे विवेचन के आधार पर इस प्रसंग को लेकर विद्वानों में और जनता में सही चित्र स्पष्ट हो सके इस दृष्टि से ही उपर्युक्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।